युवाओं में धार्मिक सहिष्णुता और अलगाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन
(आगरा शहर के विशेष सन्दर्भ में)

समाजशास्त्र में पी-एच.डी. उपाधि की आंशिक पूर्ति हेतु

प्रस्तावित रूपरेखा

शोधार्थी

सचिन प्रकाश भार्गव

शोध निर्देशिका

डॉ. दीपिका चौहान

समाजशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान विभाग, समाज विज्ञान संकाय

दयालबाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट (डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी)

दयालबाग, आगरा - 282 005

2024

प्रस्तावना

समाजशास्त्र के क्षेत्र में धर्म की महत्वपूर्ण भूमिका रही है समाज के हर एक व्यक्ति किसी न किसी धर्म भूमिका में दिखते नजर आते हैं। भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश के रूप में जाना जाता है। इसलिए वर्तमान समय में भारत की अखण्डता को बनाये रखने के लिए धार्मिक सहिष्णुता और देश के स्तम्भ युवा शक्ति में धार्मिक सहिष्णुता और अलगाव के मुद्दे पर विचार करना अति आवश्यक है। भारत में धार्मिक सहिष्णुता और युवाओं में खासकर भारत जैसे विविधता पूर्ण समाज में धार्मिक विचारधाराओं के प्रति सहिष्णुता होनी चाहिए। युवाओं के बीच धार्मिक सहिष्णुता का विकास आवश्यक है ताकि वे एक समाजसेवी समाज का निर्माण कर सकें जहां हर व्यक्ति को अपनी आस्था और विश्वास के साथ जीने का अधिकार प्राप्त हो। हालांकि, आजकल के समय में हम देख रहे हैं कि धार्मिक असहिष्णुता और अलगाव बढ़ रहे हैं। सोशल मीडिया, राजनीतिक ध्रुवीकरण और गलत जानकारी के प्रसार के कारण युवा वर्ग के बीच एक दूसरे धर्म के प्रति अविश्वास और घृणा बढ़ रही है। यह प्रवृत्ति समाज में विभाजन और संघर्ष को बढ़ावा देती है और युवाओं के बीच एकता और भाईचारे की भावना को कमजोर करती है। इस प्रकार असहिष्णुता के कारण, कुछ युवा स्वयं को समाज से अलग-थलग महसूस करने लगते हैं। वे अपने धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान के कारण दूसरों से अलग महसूस करते हैं, जिससे मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक है कि शिक्षा प्रणाली, माता-पिता और समाज युवाओं को सही दिशा दिखाएं। उन्हें विभिन्न धर्मों के बारे में सिखाना, आपसी सम्मान और संवाद को प्रोत्साहित करना, और भिन्नताओं को समझने और स्वीकारने की प्रक्रिया में शामिल करना चाहिए। धार्मिक सहिष्णुता का विकास न केवल सामाजिक समरस्ता के लिए आवश्यक है, बल्कि यह एक समृद्ध और शान्तिपूर्ण समाज के निर्माण की दिशा में भी एक महत्वपूर्ण कदम है। इसलिए समाज में युवाओं के बीच धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा देना और उन्हें अलगाव की भावना से बचाना हमारी नैतिक जिम्मेदारी बनती है।

युवाओं की भूमिका :

युवा किसी निर्धारित आयु-वर्ग से अधिक व्यापक श्रेणी है। प्रायः औपचारिक शिक्षा छोड़ने तथा अपना पहला रोजगार

पाने के बीच वाली आयु के व्यक्ति को “युवा” माना जाता है। आमतौर पर युवा आयु-वर्ग को विभिन्न देश/एजेंसियाँ तथा व्यक्तिगत एजेंसियाँ विभिन्न संदर्भों में अलग-अलग तरीकों से परिभाषित करती रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने “युवा” को 15 से 24 वर्ष तक की आयु के व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया है। राष्ट्रीय युवा नीति 2003 में “युवा” को 13 से 35 वर्ष तक की आयु के व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया गया था, लेकिन जहां तक विभिन्न नीतिगत उपायों का सम्बन्ध है, और अधिक संकेंद्रित दृष्टिकोण अपनाने के उद्देश्य से मौजूदा नीतिगत दस्तावेज में युवा आयु-वर्ग को 15 से 29 वर्ष के रूप में परिभाषित किया गया है। युवा वर्ग सभी कालों और सभी स्थानों पर समाज का एक गतिशील व प्रगतिशील घटक होता है। विश्व इतिहास में इस बात के पर्याप्त प्रमाण है कि युवा वर्ग राष्ट्रों के भाग्य विधाता व व्यवस्थापक रहे हैं। सभी कालों में सभ्यता की उत्पत्ति युवाओं के जोखिम, साहस, कल्पना व त्याग में परिलक्षित होती है। युवा निश्चित रूप से शक्ति, आदर्श, निश्चय और त्याग का प्रतीक एवं मूर्त रूप है। युवा वास्तव में उत्साह और सर्वांगीण क्रियाओं के सम्पादन की क्षमता से परिपूर्ण होता है, जो ऊर्जा के उपयोग अथवा अभिव्यक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है। भारत में युवा वर्ग की एक अच्छी संख्या है तथा समाज में उनका एक विशेष स्थान है। उन पर देश का भविष्य निर्भर है।

हाल (1904) के अनुसार युवावस्था एक स्ट्रॉन्ग एण्ड स्ट्रेस की अवस्था होती है। साथ ही यह एक अत्यधिक उद्धेग भावनात्मक, असमंजस्यता तथा अस्थिरता की स्थिति होती है। **फाइडमैन (1971)** के अनुसार सम्पूर्ण युवा को मानव जाति के उस समूह के रूप में माना जाता है, जिसने अपनी सेक्सुअल मैच्योरिटी तो प्राप्त कर ली है परन्तु उसने अभी वयस्क जीवन के पूरे अधिकार एवं कर्तव्य अर्जित नहीं किये हैं। **गोरे (1977)** युवा अथवा किशोरावस्था का सम्बन्ध सिर्फ आयु सम्बन्धी अवधारणा न होकर एक सामाजिक अवधारणा से है। कानूनी स्तर पर विभिन्न उद्देश्यों के लिए 18 या 21 वर्ष की आयु के युवा निर्धारित है। किन्तु युवा से तात्पर्य सामाजिक स्तर पर निर्धारित आयु को पूरा कर लेने से नहीं बल्कि समाज में व्यस्क रूप से अपने कर्तव्यों एवं दायित्वों को निभाने की अवस्था से है।

धर्म की अवधारणा

समाज में धर्म जीवन साधन हेतु सुगम मार्ग प्रशस्त करता है। धर्म, व्यक्ति और समाज के बीच वह कड़ी है जो दोनों के बीच सामंजस्य बनाये रखते हुए समाज की निरन्तरता बनाये रखने में भी सहायक होती है। एक ओर जहाँ धर्म लोगों की आस्था को बनाये रखने के लिए आयु के अनुरूप मानव स्वभावजन्य आवश्यकताओं की पूर्ति की स्वतंत्रता देता है तो वहीं दूसरी ओर समाज की निरन्तरता एवं स्थायित्व हेतु मानव के अनेक कर्तव्यों का बोध भी कराता है। यह पुरानी और नई पीढ़ी के बीच संघर्ष की स्थिति को बचाने के लिए समाज के प्रति मानवीय कर्तव्य इत्यादि को बताकर नयी पीढ़ी को नियंत्रित करता है।

एडवर्ड बी टेलर (1981) और हर्बर्ट स्पेंसर (1882) दोनों ही वुद्धिजीवियों ने यह कहा है कि स्वप्न, अनुगूंज और मृत्यु की प्रक्रिया को समझने और उसका विश्लेषण करने के लिए मनुष्य ने धर्म का सहारा लिया। **फ्रेजर (1890)** का कथन है कि "धर्म से मेरा तात्पर्य मनुष्य से श्रेष्ठ उन शक्तियों की शक्ति अथवा अराधना करना है, जिनके बारे में व्यक्तियों का विश्वास हो कि वह प्रकृति और मानव-जीवन को नियन्त्रित करती है तथा उसको निर्देशित भी करती है।"

डब्ल्यू रावर्टसन (1894) धर्म अज्ञात शक्तियों का अस्पष्ट भय नहीं है न ही आतंक का रूप है बल्कि एक समुदाय के सभी सदस्यों का एक ऐसी शक्ति से संबंध है, जिसके द्वारा वह अपने कानून की रक्षा करता है और नैतिक व्यवस्था का निर्माण भी करता है। **दुर्खीम (1912)** द्वारा विचरित ग्रन्थ The Elementary Forms of the Religious Life समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में एक महत्वपूर्ण कृति मानी जाती है। इस पुस्तक में उन्होंने धर्म को एक ऐसी व्यवस्था बनाया है जो सिर्फ असाधारण बातों से ही सम्बन्धित नहीं है बल्कि सामान्य जीवन की सामान्य प्रघटनाओं से भी सम्बन्धित है। **मैलिनोवस्की (1931)** "धर्म क्रिया का एक ढंग है और साथ ही विश्वासों की एक व्यवस्था भी और धर्म एक समाजशास्त्रीय घटना के साथ-साथ एक व्यक्तिगत अनुभव भी है।" **पॉल रैडिन (1938)** धर्म के भाव-श्रवण पक्ष पर अधिक बल देते हैं। इस विचारधारा के अनुसार धर्म और कुछ भी नहीं अपितु भयावह परिस्थितियों से निकलने की पूर्व-आधुनिक मनुष्य की एक भावात्मक अभिव्यक्ति है। इस दृष्टिकोण के अनुसार धर्म मनुष्य को उसके शक्तिहीन होने की भावना से उभारता है। **हॉबेल (1954)** "धर्म अलौकिक शक्ति के ऊपर विश्वास में आधारित है, जो आत्मवाद और

मानव को सम्मिलित करता है।" **जॉनसन (1977)** "एक धर्म प्राणियों, शक्तियों, स्थान अथवा अन्य वस्तुओं की अलौकिक व्यवस्था से सम्बन्धित विश्वासों एवं व्यवहारों की अधिक या कम साम्यपूर्ण व्यवस्था है।"

सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि

- **धर्म के सिद्धान्त**

दुर्खीम के अनुसार टोटमवाद धर्म का अति प्राचीन रूप हैं। गिडेंस के अनुसार 'टोटम' शब्द की प्रथम उत्पत्ति उत्तर अमेरिकन भारतीय जनजातियों में हुई लेकिन इसका व्यापक प्रयोग उन पौधों या पशुओं के सन्दर्भ में हुआ जिसमें अलौकिक शक्ति मानी गई। टोटम में विचारों की श्रृंखला होती है। जिसके अनुसार एक सामाजिक समूह के लोग एक पूर्वज से सम्बन्धित है (गौत्र, वंश आदि) जिसके लिए टोटम को दर्शाने के लिए प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है। समान टोटम के समूह के सदस्यों के बीच यौन-सम्बन्ध या विवाह प्रतिबन्धित होता है। टोटम के मारने, खाने तथा समारोह में बलि दिए जाने पर पूर्णतः प्रतिबन्ध होता है।

कार्ल मार्क्स ने कहा है कि मनुष्य जितना ही ईश्वर में विश्वास रखेगा उतना ही स्वयं से दूर होता जाएगा। उन्होंने यह भी कहा कि धर्म जनता के लिए अफीम है। लोक स्वयं व अन्य मानवों पर किए गए अन्याय एवं असमानता को ईश्वरेच्छा के रूप में स्वीकृति प्रदान करते हैं और इसके परिणामस्वरूप दमन के विरूद्ध प्रतिरोध कम हो जाता है। **मार्क्स** का विचार है, कि धर्म असमानता एवं शोषण के विरूद्ध बगावत की संभावना को कम कर देता है। **मैक्स वेबर** ने आर्थिक विकास में धर्म की उपादेयता की खोज के लिए विश्व के धर्मों का अध्ययन किया जिसमें हिन्दू धर्म भी सम्मिलित है। वेबर ने अपनी पुस्तक The Protestant Ethic and the Spirit of Capitalism (1905) में लिखा है कि पश्चिम में प्रोटेस्टैंट धर्म के उदय के कारण आधुनिक पूंजीवाद का विकास हुआ।

- वेबर के अनुसार काल्विनवाद ने उद्यमियों के विकास में सहायता की, क्योंकि प्रोटेस्टेट धर्म की मान्यता है कि भौतिक सफलता के लिए ईमानदारी से कठोर परिश्रम ही ईश्वर की सच्ची सेवा है। इसके विपरीत हिन्दू धर्म पारलौकिकता के दर्शन और भौतिक सम्पत्ति के त्योग पर जोर देने के कारण विकास में सहायक नहीं है।

धार्मिक सहिष्णुता की अवधारणा

धार्मिक सहिष्णुता और समाजशास्त्र एक गहन और महत्वपूर्ण विषय है, जो समाज में धर्म, सहिष्णुता और विभिन्न

सामाजिक प्रतिक्रियाओं के बीच सम्बन्धों को समझने का प्रयास करता है। धार्मिक सहिष्णुता का अर्थ है कि विभिन्न धार्मिक समूह एक-दूसरे के धर्म, मान्यताओं और प्रथाओं का सम्मान करें और उन पर विश्वास या अभ्यास करने की स्वतंत्रता प्रदान करें। समाजशास्त्र धार्मिक सहिष्णुता के प्रभावों का विश्लेषण करता है और यह जानने की कोशिश करता है कि यह समाज के सामाजिक शान्ति, स्थिरता, और एकता को कैसे प्रभावित करता है। धार्मिक सहिष्णुता का मूल भाव यह है कि समाज के सभी सदस्य चाहे वे किसी भी धर्म के हों, वे एक-दूसरे के धार्मिक विश्वास और प्रथाओं का सम्मान करें। इसका अर्थ यह नहीं है कि एक व्यक्ति को दूसरे के धर्म में विश्वास करना चाहिए, बल्कि यह है कि उन्हें एक-दूसरे के धर्म का सम्मान करना चाहिए और किसी भी प्रकार के धार्मिक भेदभाव, अत्याचार या हिंसा से बचना चाहिए। धार्मिक सहिष्णुता समाज में विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक होती है, यह केवल सह-अस्तित्व तक सीमित नहीं होती, बल्कि यह समाज के विभिन्न समूहों के बीच पारस्परिक सम्मान और सहयोग को बढ़ावा देती है। समाजशास्त्र धार्मिक सहिष्णुता को एक महत्वपूर्ण सामाजिक प्रक्रिया के रूप में देखता है। यह अध्ययन करता है कि धार्मिक सहिष्णुता समाज के विभिन्न चुनौतियों पर कैसे काम करती है और समाज के अन्य सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पहलुओं पर इसका क्या प्रभाव पड़ता है। विभिन्न समाजशास्त्रियों के अनुसार, धार्मिक सहिष्णुता एक स्वस्थ समाज के लिए आवश्यक है। यह समाज में विविधता को बनाए रखने और विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच सहयोग और संवाद को बढ़ावा देने में सहायक होती है। धार्मिक सहिष्णुता का अध्ययन करने वाले समाजशास्त्री यह देखने का प्रयास करते हैं कि कौन से कारक धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा देते हैं और कौन से कारक इसे बाधित करते हैं। वे यह भी विश्लेषण करते हैं कि धार्मिक सहिष्णुता समाज के अन्य प्रकार की सहिष्णुता, जैसे सांस्कृतिक, जातीय और लैंगिक सहिष्णुता के साथ कैसे जुड़ी होती है। धार्मिक सहिष्णुता का अध्ययन समाजशास्त्र में महत्वपूर्ण स्थान रखता है, क्योंकि यह समाज के भीतर धर्मों के बीच सह-अस्तित्व और आपसी सम्मान का मूल्यांकन करता है। धार्मिक सहिष्णुता का तात्पर्य है कि विभिन्न धर्मों के लोग एक-दूसरे के धार्मिक विश्वासों परंपराओं और आस्थाओं का सम्मान करें, भले ही वे उनसे सहमत न हो। समाजशास्त्र के कई

सिद्धान्तकारों ने धार्मिक सहिष्णुता की विस्तारपूर्वक चर्चा की तथा अपने महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किए।

मैक्स वेबर ने धर्म और समाज के बीच गहरे सम्बन्धों पर काम किया है। उनकी पुस्तक (The Protestant Ethic and the Spirit of Capitalism, 1905) में उन्होंने धर्म के सामाजिक और आर्थिक प्रभावों का विश्लेषण किया। वेबर का मानना था कि विभिन्न धर्मों का समाज पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है, और धर्मनिरपेक्ष समाज में धार्मिक सहिष्णुता सामाजिक स्थिरता के लिए आवश्यक है। दुर्खीम ने धर्म को समाज का एक अभिन्न अंग माना, जो सामूहिक चेतना को मजबूती प्रदान करता है। उनकी पुस्तक (The Elementary forms of the Religious life, 1912) में उन्होंने बताया कि कैसे धार्मिक समुदाय एकजुटता और सामाजिक सामंजस्य बनाए रखते है। उनका मानना था कि धार्मिक सहिष्णुता, सामाजिक एकता को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह विभाजन को रोकती है और लोगों के बीच आपसी सहयोग को बढ़ावा देती है। पीटर बर्जर ने धर्म और आधुनिकता के बीच के सम्बन्धों का विश्लेषण किया। उनकी पुस्तक (The Sacred canopy 1967) में उन्होंने बताया कि कैसे धर्म एक सामाजिक संरचना के रूप में कार्य करता है और धार्मिक सहिष्णुता समाज में विविधता और बहुलतावाद को स्वीकारने का एक साधन है। इनका मानना है कि आधुनिक समाज में धर्मनिरपेक्षता और धार्मिक सहिष्णुता एक साथ काम करती है। ब्रायन विलसन ने धर्म के समाजशास्त्र पर ध्यान केंद्रित किया और उनके विचार में धार्मिक सहिष्णुता आधुनिक समाजों में धर्म के बदलते रूपों के साथ महत्वपूर्ण हो जाती है। उन्होंने अपनी पुस्तक (Religion in Secular Society, 1966) में धर्मनिरपेक्षता के साथ धार्मिक सहिष्णुता के सह-अस्तित्व पर जोर दिया है तथा उनका मानना था कि धार्मिक सहिष्णुता आधुनिक समाजों में धार्मिक विभाजन को कम करती है। टालकॉट पार्सन्स के कार्यों में धर्म और सामाजिक संरचना के बीच गहरे सम्बन्ध को देखा जा सकता है। उनकी पुस्तक (Structural functionalism, 1955) में संरचनात्मक प्रकार्यवाद सिद्धान्त के अनुसार, धार्मिक सहिष्णुता समाज की संरचनात्मक स्थिरता और कार्यशीलता को बनाये रखने के लिए आवश्यक है। पार्सन्स ने धार्मिक सहिष्णुता को सामाजिक संस्थानों के बीच सामंजस्य बनाए रखने का एक महत्वपूर्ण घटक माना है। डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने भारतीय समाज में जाति और धर्म के आधार पर हो रहे भेदभाव के खिलाफ आवाज उठाई। उनके अनुसार, धार्मिक सहिष्णुता का अर्थ तभी परिपूर्ण है जब सभी धर्मों को समान अधिकार और सम्मान दिया जाए। उन्होंने अपनी पुस्तक 'अछूतः वे कौन थे अछूत कैसे बने' (1949) में हिन्दू धर्म के भीतर

जातिगत भेदभाव की आलोचना की और धार्मिक समानता की आवश्यकता पर जोर दिया है। एम0एन0 श्रीनिवास भारतीय समाज के सामाजिक ढांचे का अध्ययन करने वाले एक प्रमुख समाजशास्त्री थे। उन्होंने "सांस्कृतिक समरूपता" और "सहिष्णुता" के बारे में लिखा है, विशेष रूप से हिन्दू समाज में जाति और धर्म के बीच सम्बन्धों पर उनकी पुस्तक (Social change in modern India, 1963) में भारतीय समाज में धार्मिक सहिष्णुता और बहुलतावाद पर चर्चा की गई है। योगेन्द्र सिंह ने भारतीय समाज के परिवर्तनशील स्वरूप और विविधता पर गहराई से विचार किया है। उनकी पुस्तक (Modernization of Indian Tradition, 1973) में उन्होंने बताया कि कैसे धार्मिक सहिष्णुता और विविधता के सिद्धांत भारतीय समाज के आधुनिकीकरण और धर्मनिरपेक्षता के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। टी.एन. मदान ने भारतीय समाज में धर्म और धार्मिक सहिष्णुता पर विशिष्ट रूप से लिखा है। उन्होंने इस विषय पर गहन अध्ययन किया और बताया कि भारतीय समाज में धार्मिक विविधता को सहिष्णुता के साथ कैसे निभाया जाता है। उनकी पुस्तक (Religion in India, 1991) में धार्मिक सहिष्णुता धर्म के सामाजिक प्रभावों का विश्लेषण करती है। आशीष नंदी एक प्रमुख समाजशास्त्री और राजनीतिक मनोविज्ञानी है, जिन्होंने भारतीय समाज में धर्म और सहिष्णुता पर महत्वपूर्ण कार्य किया है। उनकी पुस्तक (The Intimate Enemy, 1995) **और** (The Savage Freud) में धार्मिक सहिष्णुता, सांस्कृतिक विविधता और औपनिवेशिक प्रभावों के बारे में चर्चा की गई है। रामचंद्र गुहा एक प्रख्यात इतिहासकार माना जाता है, लेकिन उनके सामाजिक और राजनीतिक विचार भारतीय समाजशास्त्र से गहरे जुड़े हैं। उनकी पुस्तक (India after Gandhi, 2007) और में भारत के विभाजन के बाद के सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक परिदृश्यों की चर्चा की गई है, जिसमें धार्मिक सहिष्णुता पर भी जोर दिया गया है।

धार्मिक सहिष्णुता के सामाजिक प्रभाव

धार्मिक सहिष्णुता का समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह समाज में शान्ति, स्थिरता और समरसता को बढ़ावा देते हैं। धार्मिक सहिष्णुता का प्रभाव सामाजिक एकता मजबूत होती है और समाज में विभिन्न समूहों के बीच आपसी समझ और सहयोग की भावना विकसित होती है। धार्मिक सहिष्णुता का प्रभाव समाज में शिक्षा, स्वास्थ्य,

और आर्थिक विकास के क्षेत्र में सकारात्मक रूप से पड़ता है। जब विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच आपसी सम्मान और सह-अस्तित्व की भावना होती है, तो यह सामाजिक प्रगति को बढ़ावा देता है। इसके अलावा, धार्मिक सहिष्णुता व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन पर भी सकारात्मक प्रभाव डालती है। यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता को बनाए रखने और व्यक्ति की धार्मिक पहचान को सुरक्षित रखने में सहायक होती है। धार्मिक सहिष्णुता के कारण समाज में हिंसा और संघर्ष की संभावनाए कम हो जाती है। यह समाज में एक स्वस्थ संवाद और बहस की संस्कृति को बढ़ावा देती है, जहाँ लोग अपने मतभेदों को शान्तिपूर्ण और रचनात्मक तरीके से सुलझा सकते हैं।

धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा देने वाले कारक

- शिक्षा प्रणाली में धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा देने वाले पारक्रमों का समावेश करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। शिक्षा व्यक्ति के दृष्टिकोण को व्यापक बनाने और अन्य धार्मिक समूहों के प्रति सम्मान और समझ विकसित करने में सहायक होती है।
- धार्मिक संवाद विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच संवाद और सहयोग को बढ़ावा देना आवश्यक है। धार्मिक संवाद से आपसी गलतफहमियां दूर होती हैं और पारस्परिक सम्मान बढ़ता है।
- कानूनी सुरक्षा के सम्बन्ध में सरकारों को ऐसे कानून बनाने चाहिए जो सभी धार्मिक समूहों के अधिकारों की रक्षा करें और धार्मिक भेदभाव, अत्याचार और हिंसा को रोकें। कानूनी सुरक्षा, धार्मिक सहिष्णुता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- सांस्कृतिक आदान-प्रदान विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच सांस्कृतिक आदान प्रदान से आपसी समझ और सम्मान बढ़ता है। सांस्कृतिक कार्यक्रमों त्योहारों, और अन्य सामाजिक आयोजनों के माध्यम से धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा दिया जा सकता है।
- आर्थिक समानता को कम करने से भी धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा मिलता है। जब सभी धार्मिक समूहों को समान आर्थिक अवसर मिलेगा, तो यह सामाजिक एकता को मजबूत करने में सहायक सिद्ध होगा।

धार्मिक अलगाव की अवधारणा

समाज में हर एक व्यक्ति अपने आप को अपनी गतिविधियों का एक मात्र स्वामी मानता है। ये गतिविधियों और उनके

परिणाम उसे स्वामी बना देते हैं, जिनका वह धार्मिक रूप से पालन करता है और परिणामस्वरूप वह बाकी समाज से अलग-थलग पड़ जाता है। अलगाव मनुष्य के मानस में निहित और यह समाज का परिणाम नहीं है। मनुष्य के मानस में हमेशा "इरोस" (जीवन या प्रेम का आवेग) और "थानाटोस" (मृत्यु या घृणा का आवेग) के बीच संघर्ष चलता रहता है। "थानाटोस" के परिणामस्वरूप मनुष्य समाज से अलग हो जाता है और अलग-थलग पड़ जाता है। अलगाव का विकास नहीं होता बल्कि यह आत्मा की एक सहज प्रवृत्ति है। मान (2001) अलगाव एक ऐसी स्थिति का अनुभव है जिसमें किसी समूह या गतिविधि से अलग-थलग होने की स्थिति होती है, जिसका हिस्सा व्यक्ति को होना चाहिए या जिसमें उसे शामिल होना चाहिए। यह सामाजिक सम्बन्धों की एक ऐसी स्थिति को संदर्भित करता है जिसमें एकीकरण या सामान्य मूल्यों के कम स्तर और व्यक्तियों के बीच या समुदाय या कार्य वातावरण में किसी व्यक्ति और लोगों के समूह के बीच उच्च स्तर की दूरी या अलगाव होता है। संधु और तुंग (2004) द्वारा बताया गया कि परिवादिक वातावरण में अत्याधिक संघर्ष अलगाव को बढ़ा सकता है, जबकि उच्च सामंजस्य और नियंत्रण दोनों जाति के लिए कम अलगाव की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देते है। परिवार में अधिक अभिव्यक्ति और बौद्धिक सांस्कृतिक अभिविन्यास लड़कियों में अलगाव के प्रति संवेदनशीलता को कम करता है, और परिवार में अधिक उपलब्धि अभिविन्यास लड़कों में कम अलगाव की दिशा में योगदान देता है। अरोड़ा (2014) के अनुसार लगभग सभी स्तरों के शिक्षण संस्थानों के छात्रों में अलगाव और सामाजिक चिंता सम्बन्धी विकार बढ़ रहे हैं। ये समस्याएं गम्भीर और हानिकारक है, जिससे न केवल संस्थान का विकास बाधित होता है, बल्कि व्यक्ति के व्यक्तित्व पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। नविता और श्री देवी (2019) ने व्यक्त किया कि उनके द्वारा किए गये अध्ययन में अधिकांश (88%) सामाजिक अलगाव के उच्च स्तर से पीड़ित थे, जिसमें लड़कियों की तुलना में किशोर लड़के अधिक थे। शुरूआती वर्षों में बदमाशी के शिकार होने वाले किशोरों ने उच्च सामाजिक अलगाव का अनुभव किया आयु और आय के स्तर या सामाजिक-आर्थिक स्थिति जैसी जनसांख्यिकीय प्रोफाइल का सामाजिक अलगाव पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। खंगुरा एट अल (2020) ने छात्राओं में शैक्षणिक, अलगाव भावनात्मक बुद्धिमत्ता और लचीलेपन के बीच महत्वपूर्ण

सम्बन्ध पाया।

धार्मिक अलगाव और समाजशास्त्र एक अत्यंत महत्वपूर्ण और जटिल विषय है, जो समाज में धर्म के विभिन्न रूपों, उनकी भूमिकाओं और उनके प्रभावों का अध्ययन करता है। धार्मिक अलगाव का तात्पर्य उस स्थिति से है कि जब किसी समाज में विभिन्न धार्मिक समूह अपने-अपने धार्मिक विश्वासों, मान्यताओं और प्रथाओं के आधार पर अलग-अलग रहते है या सामाजिक रूप से एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं। समाजशास्त्र इस प्रक्रिया का विश्लेषण करता है, यह समझने का प्रयास करता है कि धर्म और धार्मिक अलगाव समाज के अन्य पहलुओं पर किस प्रकार से प्रभाव डालते हैं। धार्मिक अलगाव का सीधा अर्थ है विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच किसी एक पर अलगाव का होना। यह अलगाव कई कारणों से हो सकता है, जैसे धार्मिक मान्यताओं से असहमति, सांस्कृतिक भिन्नताएँ या ऐतिहासिक संघर्ष/धार्मिक अलगाव समाज के विभिन्न स्तरों पर देखा जा सकता है, जैसे परिवार समुदाय, या राष्ट्र। यह अलगाव अक्सर सामाजिक एकता और शांति के लिए चुनौती बन जाता है, क्योंकि यह सामाजिक विभाजन को बढ़ावा देता है और विभिन्न समूहों के बीच संघर्ष को जन्म देता है। समाजशास्त्र धार्मिक अलगाव को एक समाजशास्त्रीय घटना के रूप में देखता है। यह अध्ययन करता है कि कैसे धार्मिक अलगाव समाज में अन्य सामाजिक प्रक्रियाओं और संरचनाओं के साथ सम्बन्ध रखता है, समाजशास्त्र यह देखने का प्रयास करता है कि धार्मिक अलगाव का समाज के आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक पहलुओं पर क्या प्रभाव पड़ता है। समाजशास्त्रियों के अनुसार, धार्मिक अलगाव का कारण केवल धार्मिक मतभेद ही नहीं होता, बल्कि इसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारक भी शामिल होते हैं। उदाहरण के लिए किसी विशेष समाज में आर्थिक असमानता धार्मिक अलगाव को बढ़ा सकती है, क्योंकि गरीब और अमीर वर्गों के बीच धार्मिक मान्यताओं और प्रथाओं में भिन्नता हो सकती है। इसी प्रकार राजनीतिक नीतियाँ भी धार्मिक अलगाव को बढ़ा सकती हैं, जैसे कि किसी एक धार्मिक समूह के पक्ष में कानून बनाना या दूसरे समूह के अधिकारों का हनन करना।

धार्मिक अलगाव के सामाजिक प्रभाव

धार्मिक अलगाव के समाज पर कई प्रकार के प्रभाव होते हैं। यह सामाजिक समरसता और शान्ति को बाधित करता है और समाज में संघर्ष और हिंसा को जन्म देता है। धार्मिक अलगाव के कारण समाज में विभिन्न समूहों के बीच आपसी अविश्वास पनपता है। इसके अलावा, धार्मिक अलगाव के कारण समाज में शिक्षा, स्वास्थ्य और आर्थिक विकास जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में भी असमानता बढ़ी है। उदाहरण के लिए, यदि किसी विशेष धार्मिक समूह को शिक्षा या रोजगार में भेदभाव का सामना करना पड़ता है, तो यह उस समूह के समग्र विकास को प्रभावित करता है।

धार्मिक अलगाव का प्रभाव व्यक्तिगत स्तर पर भी देखा जा सकता है। यह व्यक्तिगत पहचान, आत्मसम्मान और मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। धार्मिक अलगाव के कारण व्यक्ति को समाज से अलग-थलग महसूस होता है, जो अवसाद और अन्य मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं के उत्पन्न होने कारण बनता है।

धार्मिक अलगाव के कारण

- धार्मिक असहिष्णुता जब एक धार्मिक समूह अपने धर्म को दूसरे धर्मों से श्रेष्ठ मानता है और अन्य धार्मिक समूहों के प्रति असहिष्णुता का व्यवहार करता है, तो यह धार्मिक अलगाव को बढ़ावा देता है।
- सांस्कृतिक भिन्नता विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच सांस्कृतिक भिन्नताओं के कारण भी धार्मिक अलगाव हो सकता है। जैसे- भाषा, पहनावा, खान-पान आदि में भिन्नता।
- आर्थिक असमानता आर्थिक असमानता भी धार्मिक अलगाव का एक महत्वपूर्ण कारण हो सकती है। जब एक धार्मिक समूह आर्थिक रूप से सशक्त होता है और दूसरा समूह आर्थिक रूप से पिछड़ा हुआ होता है तो इसके परिणामस्वरूप अलगाव की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।
- धार्मिक अलगाव के विषय पर कई समाजशास्त्रियों ने विचार दिए है, और उन्होंने अपने दृष्टिकोण को सामाजिक विभाजन, संघर्ष और पहचान पर आधारित रखे हैं कुछ प्रमुख समाजशास्त्रीयों ने अपने विचार प्रस्तुत किये हैं।

मैक्स वेबर ने धर्म और समाज के बीच संघर्ष व सम्बन्धों पर गहराई से अध्ययन किया, विशेष रूपसे धार्मिक समूहों और उनके सामाजिक आर्थिक प्रभाव के बारे में किया। हालांकि उन्होंने सीधे “धार्मिक अलगाव” पर विचार नहीं किया;

उनका काम इस बात पर केंद्रित था कि कैसे धार्मिक आस्थाएँ और व्यवहार समाज में अलगाव और सामाजिक समूहों के निर्माण का कारण बनते हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक (The protestant Ethic and the Spirit of Capitalism, 1904) में बताया है कि कैसे धार्मिक विचारधाराऐं (विशेष रूप से प्रोटेस्टेंटिज्म) आर्थिक और सामाजिक व्यवहारों को प्रभावित करती है, जो धार्मिक समूहों के बीच भौतिक और सांस्कृतिक अलगाव को बढ़ावा देते हैं। दुर्खीम ने धर्म पर समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण सामूहिक चेतना और सामाजिक एकता पर केन्द्रित किया। उन्होंने माना कि धर्म समाज को एकजुट रखने वाला प्रमुख तत्व हो सकता है, लेकिन जब विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच समानता और सामूहिकता नहीं होती, तो यह अलगाव विभाजन का कारण बनता है। उन्होंने अपनी पुस्तक (The Elementary Formus of Religious life, 1912) में बताया है कि धर्म कैसे समाज का एक आवश्यक हिस्सा है और कैसे यह समाज में विभिन्न समूहों के बीच एकता और अलगाव को प्रभावित करता है। कार्ल मार्क्स ने धर्म को सामाजिक विभाजन और संघर्ष के सन्दर्भ में प्रस्तुत किया। उन्होंने इसे “समाज के लिए अफीम” कहा यह तर्क देते हुए कि धर्म सामाजिक असमानताओं और वर्ग संघर्ष को छिपाने के लिए काम करता है। धार्मिक अलगाव को मार्क्स ने आर्थिक वर्गों के साथ जोड़ा है, जहाँ धर्म का उपयोग वर्गों के बीच सामाजिक दूरी बनाए रखने के लिए किया जाता है। मार्क्स ने अपनी पुस्तक (Critique of Hegel Philosophy of Right, 1843) में बताया कि कैसे धर्म शोषित वर्गों को विभाजित और नियंत्रित रखने का साधन बनता जा रहा है, जिससे धार्मिक समूहों के बीच अलगाव और विभाजन पैदा होते हैं। बुरदियु ने सामाजिक पुँजी और सांस्कृतिक पुँजी के आधार पर धार्मिक और सांस्कृतिक विभाजन का अध्ययन किया। उनका मानना है कि धर्म एक सांस्कृतिक पुँजी के रूप में समूहों के बीच अलगाव को बढ़ावा देता है। धार्मिक संस्थाएँ सामाजिक पदानुक्रम बनाए रखने में मदद करती है, जिससे धार्मिक और सामाजिक विभाजन कायम रहता है। इन्होंने अपनी पुस्तक Distinction : A Social Critique of the Judgment of Taste (1974) में सामाजिक और सांस्कृतिक विभाजन के संदर्भ में धार्मिक अलगाव का विश्लेषण किया। हर्बर्ट मारक्युज ने धर्म को एक ऐसी शक्ति के रूप में देखा, जो समाज में विभाजन और संघर्ष को वैध ठहराने में मदद करता है। उनका तर्क है कि धार्मिक विभाजन अक्सर सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को छिपाने का कार्य करता है साथ ही इन्होंने अपनी पुस्तकः One-Dimensional Man (1964)

में बताया कि धर्म कैसे सामाजिक विभाजन और अलगाव के माध्यम से सत्ता संरचनाओं की सेवा करता है। एम0एन0 श्रीनिवास ने भारतीय समाज में जाति और धर्म के बीच गहरे संबंधों का अध्ययन किया। उन्होंने बताया कि किस प्रकार जातीय और धार्मिक अलगाव भारतीय समाज की संरचना को प्रभावित करते हैं। हालांकि उनका प्राथमिक ध्यान जाति व्यवस्था पर था, उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि किस प्रकार धर्म और जाति सामाजिक विभाजन और अलगाव को कायम रखते हैं, साथ ही उन्होंने अपनी पुस्तकः Religion and Society Among the Coorgs of South India (1952) में दक्षिण भारत के कोडागु समाज का अध्ययन किया, जिसमें उन्होंने धार्मिक और जातीय पहचान के आधार पर अलगाव और सामाजिक दूरी को स्पष्ट किया। योगेन्द्र सिंह ने भारतीय समाज के आधुनिकरण पर ध्यान केंद्रित किया और यह भी अध्ययन किया कि कैसे धर्म और धार्मिक संस्थाएँ आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन और विभाजन को प्रभावित करती है। उनका मानना है कि धार्मिक समूहों के बीच अलगाव और संघर्ष, विशेष रूप से शहरीकरण और औधोगिकरण के संदर्भ में, भारत में बढ़ते है। इन्होंने अपनी पुस्तक (Modernization of Indian Tradition, 1986) में बताया कि कैसे पारंपरिक धार्मिक संरचनाएँ सामाजिक बदलाव का सामना करती है और धार्मिक अलगाव किस प्रकार इन बदलावों के साथ बढ़ता या घटता है। आशीष नंदी ने धर्म, राजनीति, और सांस्कृतिक अलगाव के मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित किया। उन्होंने भारतीय समाज में धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान के आधार पर हो रहे विभाजन और सांप्रदायिक संघर्षों का विश्लेषण किया। उनका तर्क था कि धार्मिक अलगाव औपनिवेशिक शासन के दौरान और अधिक मजबूत हुआ और आज यह भारतीय राजनीति और समाज में गहराई से व्याप्त है। उन्होंने अपनी पुस्तक The Intimate Enemy : Loss and Recovery of Self Under Colonialism (1983) में औपनिवेशिक शासन के दौरान धार्मिक और सांस्कृतिक विभाजन का अध्ययन किया, जिसमें उन्होंने बताया कि कैसे औपनिवेशिक शासन ने धार्मिक अलगाव को बढ़ावा दिया। ताराचंद का अध्ययन भारतीय इतिहास और धार्मिक समन्वय के क्षेत्र में महत्वपूर्ण है। उन्होंने धार्मिक सह-अस्तित्व और अलगाव दोनों पर अध्ययन किया और बताया कि किस प्रकार भारत में धार्मिक विभाजन और अलगाव ऐतिहासिक रूप से कैसे विकसित हुए। उनका विचार था कि धार्मिक समुदायों के बीच विभाजन को कभी-कभी राजनीतिक हितों द्वारा बढ़ावा दिया जाता है। ताराचन्द ने अपनी पुस्तक Influence of

Islam on Indian Culture (1983) में भारतीय समाज में इस्लाम और हिन्दू धर्म के बीच विभाजन और सह-अस्तित्व का अध्ययन किया और धार्मिक अलगाव के कारणों पर प्रकाश डाला। ज्योतिराव फुले ने भारतीय समाज में ब्राह्मणवादी व्यवस्था और धर्म के आधार पर होने वाले सामाजिक और धार्मिक अलगाव की आलोचना की। उनका तर्क था कि ब्राह्मणवादी धर्म ने निचली जातियों को धार्मिक रूप से अलग-थलक कर दिया है, जिससे उनके साथ भेदभाव और शोषण होता है। उन्होंने धार्मिक समानता और सामाजिक न्याय का पक्ष लिया उन्होंने अपनी पुस्तक Gulamgiri (1873) में भारतीय समाज में जातिगत और धार्मिक आधार पर अलगाव के मुद्दों का गहराई से विश्लेषण किया। रजनी कोठारी ने भारतीय और धर्म के बीच जटिल सम्बन्धों का अध्ययन किया। उन्होंने धार्मिक अलगाव को राजनीति और धर्म के मिश्रण के सन्दर्भ को समझाया तथा विशेष रूप से साम्प्रदायिक राजनीति के सन्दर्भ में उनका मानना था कि धार्मिक विभाजन भारतीय समाज और राजनीति में सामाजिक असमानता और संघर्ष को बढ़ावा देते हैं। साथ ही उन्होंने अपनी पुस्तक Politics in India (1970) में भारतीय राजनीति में धार्मिक और जातिय अलगाव के प्रभावों पर ध्यान केंद्रित किया।

धर्म, राज्य और धर्मनिरपेक्षता

एक लोकतांत्रिक देश के लिए धर्मनिरपेक्षता महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक है। दुनिया के तकरीबन सभी देशों में एक से ज्यादा धर्मों के लोग साथ-साथ रहते है। जाहिर है हर देश में किसी एक धर्म के लोगें की संख्या ज्यादा होगी। अब अगर बहुमत वाले धर्म के खिलाफ भेदभाव करने और उन्हें परेशान करने के लिए इस सत्ता और राज्य के आर्थिक संसाधनों का इस्तेमाल कर सकता है। बहुमत की इस निरंकुशता के चलते धार्मिक अल्पसंख्यकों के साथ भेदभाव हो सकता है। उनके साथ जोर जबरदस्ती हो सकती है। यहाँ तक कि कई बार उनकी हत्या भी कर दी जाती है बहुमत चाहे तो अल्पसंख्यकों को उनके धर्म के अनुसार जीने से रोक सकता है। धर्म के आधार पर किसी भी तरह का भेदभाव उन अधिकारों का उल्लधंन है जो एक लोकतांत्रिक समाज किसी भी धर्म को मानने वाले अपने प्रत्येक नागरिक को प्रदान करता है लिहाजा बहुमत की निरंकुशता और उसके कारण मौलिक अधिकारों का हनन वह अहम कारण है जिसके चलते लोकतांत्रिक समाजों में राज्य और धर्म को अलग-अलग रखना इतना महत्वपूर्ण माना जाता है। लोकतांत्रिक समाजों में धर्म को राज्य में अलग रखने का एक महत्वपूर्ण कारण यह है कि हमें लोगों के धार्मिक चुनाव के अधिकार की रक्षा करनी है। इसका अर्थ यह है कि देश के किसी भी व्यक्ति को एक धर्म से निकलने और दूसरे धर्म

को अपनाने या धार्मिक उपदेशों की अलग ढंग से व्याख्या करने की स्वतंत्रता होती है।

भारत में धर्मनिरपेक्षता

भारतीय संविधान में उल्लेखित है कि भारतीय राज्य धर्मनिरपेक्ष रहेगा देश के संविधान अनुसार केवल धर्मनिरपेक्ष राज्य ही अपने उद्देश्यों को साकार करते हुए निम्नलिखित बातों का ख्याल रख सकता है कि कोई एक धार्मिक समुदाय किसी दूसरे धार्मिक समुदाय को न दबाए, कुछ लोग अपने ही धर्म के अन्य सदस्यों को न दबाए, राज्य न तो किसी खास धर्म को थोपेगा और न ही लोगों की धार्मिक स्वतंत्रता छीनेगा, इस तरह के दबदबे को रोकने के लिए भारतीय राज्य कई तरह से काम करता है पहला तरीका यह है कि वह खुद को धर्म से दूर रखता है। भारतीय राज्य की बागडोर न तो किसी एक धार्मिक समूह के हाथों में है और न ही राज्य किसी एक धर्म को समर्थन देता है। भारत में कचहरी, थाने, सरकारी विद्यालय और दफ्तर जैसे सरकारी संस्थानों में किसी खास धर्म को प्रोत्साहन देने या उसका समर्थन करने की अपेक्षा नहीं की जाती है, धार्मिक वर्चस्व को रोकने के लिए भारतीय धर्मनिरपेक्षता का दूसरा तरीका है अहस्तक्षेप की नीति इसका मतलब है, कि सभी धर्मों की भावनाओं का सम्मान करने और धार्मिक क्रियाकलापों में दखल न देने के लिए, राज्य कुछ खास धार्मिक समुदायों को कुछ विशेष छूट देता है। जैसे- सिख लोगों को हैलमेट पहनने की जरूरत नहीं, कारण यह कि भारतीय राज्य इस बात को मान्यता देता है कि प्रथाओं के मुताबिक महत्वपूर्ण है लिहाजा इन धार्मिक आस्थाओं में दखलंदाजी से बचने के लिए राज्य के कानून में रियायत दे दी है, स्कूल के भीतर किसी धार्मिक त्यौहार का आयोजन सभी धर्मों के साथ एक जैसा व्यवहार करने की सरकारी नीति के खिलाफ होता, सरकारी स्कूल अपनी प्रातः कालीन प्रार्थनाओं या धार्मिक आयोजनों के जरिए किसी एक धर्म को बढ़ावा नहीं दे सकती है, यह नियम स्कूलों पर लागू नहीं है, धार्मिक वर्चस्व को रोकने के लिए भारतीय धर्मनिरपेक्षता का तीसरा हस्तक्षेप है। यह इस बात का उपयुक्त उदाहरण है कि किस तरह एक ही धर्म के लोग (ऊँची जाति के हिन्दू) अपने ही धर्म के अन्य सदस्यों (कुछ निचली जातियों) को दबाते हैं, धर्म के नाम पर अलग-अलग करने और भेदभाव को रोकने के लिए भारतीय संविधान ने छुआछूत पर पाबन्दी लगाई है। इस उदाहरण में राज्या धर्म के नाम पर अलग-थलग

करने और भेदभाव को बढ़ावा देने वाली प्रथा को खत्म करने के लिए धर्म में हस्तक्षेप कर रहा है क्योंकि वे भी इसी देश के नागरिक है। इसी तरह माँ-बाप की संपत्ति में बराबर हिस्से के अधिकार का सम्मान करने के लिए राज्य को समुदायों के धर्म पर आधारित 'निजी कानूनों में भी हस्तक्षेप करना पड़ सकता है। राज्य का हस्तक्षेप सहायता के रूप में भी हो सकता है। भारतीय संविधान धार्मिक समुदायों को अपने स्कूल और कॉलेज खोलने का अधिकार देता है। गैर-प्राथमिकता के आधार पर राज्य से उन्हें सीमित आर्थिक सहायता भी मिलती है। एम.एन. रॉय ने अपनी पुस्तक (The Hindu View of Life 1927) में तर्कसंगतता, स्वतंत्रता और समाज में धर्म की भूमिका पर अपने विचार प्रस्तुत किए और उन्होंने इस बात पर भी ध्यान केन्द्रित किया कि धर्म और राजनीति का अलगाव लोकतंत्र के लिए आवश्यक है। वह मानते थे कि मानव प्रगति के लिए समाज को तर्क, विज्ञान और लोकतंत्र की ओर बढ़ना चाहिए, न कि धार्मिक अंधविश्वास और कुरीतियों की ओर। रॉय का यह मानना था कि राजनीति और धर्म को अलग-अलग रहना चाहिए। वह इस बात के विरोधी थे कि धर्म का इस्तेमाल राजनीतिक उद्देश्यों के लिए किया जाए, उनके अनुसार एक धर्मनिरपेक्ष राज्य ही सभी नागरिकों को समान रूप से देखता है, चाहे उनकी धार्मिक मान्यता कोई भी हो उन्होंने धार्मिक संस्थाओं की कड़ी आलोचना की, वह मानते थे कि धर्म, तर्कसंगतता और स्वतंत्र सोच के खिलाफ है, उन्होंने कहा कि धर्म अधिकतर अंधविश्वास और असमानता को बढ़ावा देता है और इसलिए एक आधुनिक समाज के लिए धर्मनिरपेक्षता आवश्यक है, धर्मनिरपेक्षता व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सुनिश्चित करती है, उनका मानना था कि एक धर्मनिरपेक्ष समाज में हर व्यक्ति को अपनी आस्था चुनने और उसका पालन करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए, लेकिन वह आस्था राज्य के कार्यों में हस्तक्षेप नही कर सकती। धर्म को निजी जीवन तक सीमित रहना चाहिए, उनका तर्क था कि धर्मनिरपेक्षता समानता और न्याय के मूल्यों को प्रोत्साहित करती है, जब राज्य धर्म से प्रभावित होता है, तो वह नागरिकों के बीच भेदभाव करता है। धर्मनिरपेक्षता सभी धर्मे के प्रति तटस्थ रहती है और किसी भी विशेष धर्म के पक्ष में नहीं जाती, जिससे समाज में समानता का भाव बनता है। सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने अपनी पुस्तक The Hindu View of Life (1927) में हिन्दू धर्म के मूल सिद्धांतों और जीवन के दृष्टिकोण पर चर्चा की। उन्होंने इसमें धार्मिक

सहिष्णुता और समावेशिता के महत्व पर जोर दिया, जो उनके धर्मनिरपेक्षता के विचारों के साथ मेल खाता है, उनका मानना था कि विभिन्न धर्मों को भारतीय समाज में सह-अस्तित्व में रहना चाहिए, और यह सहिष्णुता भारतीय धर्मनिरपेक्षता की आधारशिला होनी चाहिए। उनका धर्मनिरपेक्षता पर दृष्टिकोण भारतीय परंपरा और सांस्कृतिक विविधता के संदर्भ में था। उनका मानना था कि धर्मनिरपेक्षता को धर्म के प्रति शत्रुता नहीं, बल्कि सभी धर्मों के समान आदर और सम्मान होना चाहिए। उनके विचारों में धार्मिक सहिष्णुता और बहुलवाद की विशेष महत्वता थी, जो एक धर्मनिरपेक्ष समाज की बुनियादी जरूरत होती हैं। Religion and Society (1947) में उन्होंने धर्म और समाज के बीच के सम्बन्धों पर विचार किया और तर्क दिया कि धर्म को राज्य की नीतियों को निर्धारित नहीं करना चाहिए, लेकिन धर्म का नैतिक और आध्यात्मिक प्रभाव समाज पर सकारात्मक होना चाहिए। उनका मानना था कि धर्मनिरपेक्षता का अर्थ यह नहीं है कि धर्म का समाज में कोई स्थान नहीं है, बल्कि राज्य को धार्मिक तटस्थता रखनी चाहिए। जवाहरलाल नेहरू ने अपनी पुस्तक Discovery of India (1946) में भारतीय इतिहास, संस्कृति और सभ्यता पर अपने विचार प्रकट किए है। इसमें उन्होंने भारत की धार्मिक और सांस्कृतिक विविधता की प्रशंसा की और बताया कि कैसे भारत की समृद्ध विरासत ने उसे सहिष्णु और बहुलतावादी समाज बनाया। उन्होंने धर्मनिरपेक्षता को भारतीय समाज के भविष्य के लिए आवश्यक बताया ताकि देश में सभी धर्म और संस्कृतियाँ एक साथ रह सकें। An Authobiography (1936) नामक पुस्तक में उन्होंने अपने व्यक्तिगत और राजनीतिक जीवन के अनुभवों का वर्णन किया और अपने धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण को विस्तार से बताया और इस तथ्य पर विचार दिया कि आधुनिक भारत को धार्मिक विभाजन से ऊपर उठना होगा। धर्मनिरपेक्षता के विचार आधुनिकता, तर्कसंगतता और प्रगति पर आधारित है, वे मानते थे कि धर्म को राज्य और राजनीति से अलग रखना आवश्यक है, ताकि भारत में धार्मिक सहिष्णुता, समानता और सामाजिक न्याय को बढ़ावा दिया जा सके। उनके लिए धर्मनिरपेक्षता का मतलब केवल धर्म का राजनीतिक उपयोग रोकना नहीं था, बल्कि एक ऐसा समाज बनाना था जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण, प्रगति और समावेशिता के सिद्धान्तों पर आधारित हो।

समस्या का कथन

वर्तमान समय में भारत में कई साम्प्रदायिक हिंसक घटनाएं धर्म आधारित हुई, जिनमें से अधिकतर घटनाओं में युवाओं का हस्तक्षेप रहा। समकालीन समय में वर्ष 2016-2020 के विविध साम्प्रदायिक एवं धार्मिक दंगों के 3.399 मामले सामने आए जो विषद् चिन्ता का विषय बने एन.सी.आर.बी. (राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो) के अनुसार वर्ष 2014 से 2020 के अन्तराल में साम्प्रदायिक हिंसा की लगभग 857 घटनाएँ सामने आयीं, जो वर्ष 2019 की अपेक्षा में 94 प्रतिशत अधिक थी। इसके समानुरूप धर्म पर आधारित घटनाएं पहले भी घटित हुई थी, जैसे 1984 में सिख विरोधी दंगे, 1990 में कश्मीरी हिंसक घटना, 2002 में गुजरात दंगे, 2013 में उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर में हिन्दू व मुस्लिम सम्प्रदाय के मध्य टकराव इत्यादि। इन सभी साम्प्रदायिक घटनाओं में अधिकतम युवा वर्ग की सहभागिता रही है, ऐसी हिंसक घटनाएं भारत की एकता व अखण्डता को प्रभावित करती रही है। युवा अन्य धर्मों के प्रति अलगावित महसूस कर रहा है, जिसके परिणामस्वरूप उसमें असहिष्णुता नकारात्मकता व घृणा की भावना उत्पन्न हो रही है। ऐसी साम्प्रदायिक घटनाएं युवाओं के शोषित होने का कारण बनती है जिसके फलस्वरूप संघर्ष पैदा करती है युवाओं में सामाजिक विचलन व समाज में प्रतिमान हीनता की दशा उत्पन्न हो जाती है, यह शोध कार्य में युवाओं से जुड़ी धर्म सम्बन्धित सामाजिक समस्याओं की विवेचना आगरा शहर के विशेष संदर्भ में किया जायेगा।

अध्ययन का महत्व

विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश भारत का आगामी भविष्य भारतीय युवाओं के योगदान पर आधारित है। भारतीय युवाओं की मानसिकता, उनके विचार एवं अपने से अन्य धर्मां के प्रति या तों अलगावादी है या समस्त धर्मां के प्रति सहिष्णु है, वास्तव में यह एक चिन्तनीय विषय है, क्योंकि युवाओं की मानसिकता, विचार एवं व्यववहार का एक प्रमुख आधार धर्म भी है। वर्तमान समय में विविध साम्प्रदायिक दंगे व धर्म के आधार पर घटित घटनाओं में युवाओं का संलिप्त होना चिन्ता का प्रमुख विषय बन गया है। अतः धार्मिक सहिष्णुता अहिंसा के सिद्धान्त पर प्रतिफल है जो अहिंसा के मूलभूत सिद्धान्त पर आधारित है, भारतीय युवाओं में किसी अन्य धर्म के प्रति अलगाव की भावना रहती है

तो भारत की अखण्डता व एकता खतरे में पड़ जाएगी, जिसके परिणामस्वरूप, युवा का सहिष्णु होना भारत के लिए अत्यन्त आवश्यक है, जो कि मार्ग प्रशस्त करेगा। अतः भारत में सामंजस्य की भावना उत्पन्न करने तथा भाईचारे व शान्ती स्थापित करने के लिए धार्मिक सहिष्णुता का विकास करना भी महत्वपूर्ण है। धार्मिक कट्टरता के निराकरण के लिए भी युवाओं में धार्मिक सहिष्णुता की भावना का विकास अत्यन्त आवश्यक है। वास्तव में युवाओं में सहिष्णुता का भाव स्वतन्त्रता तथा समानता के वातावरण में सम्भव है। लोकतन्त्र के इस वातावरण में समस्त युवा असहिष्णुता जिसके आधार स्वरूप समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में यह शोध कार्य प्रासंगिक होगा। जो अगामी जीवन में आने वाले कई शोधार्थियों के लिए सफल दिशा निर्देश करने का कार्य करेगा। यद्यपि राजनीतिक परिपे्रक्ष्य में इस विषय पर सामान्यतः कई शोध कार्य किये जा चुके है परन्तु समाजशास्त्र के क्षेत्र में यह कार्य नवीन एवं प्रसांगिक तथ्यों को प्रस्तुत कर समाजशास्त्रीय शोध को विशेष आधार प्रदान करने में अहम भूमिका निभायेगा।

साहित्य का पुर्नावलोकन

1. स्मिथ (1894) ने प्रकाशित अपनी पुस्तक शीर्षक ‘दि रिलिजन ऑफ़ दि सेमिटिज’ में धर्म को अलौकिक शक्तियों में विश्वास का उत्पाद न मानकर धार्मिक कर्मकाण्डों एक संस्कारों का परिणाम माना है। उसने अपने अनुसंधान परिणामों के आधार पर यह निष्कर्ष ज्ञापित किया कि आदिम धर्म प्राथमिक रूप से ‘संस्थाओं एवं व्यवहारों, जैसे कर्मकाण्डों और संस्कारों से प्रादुर्भत हुआ तथा मिथक या पौराणिक गाथाओं से सम्बद्ध विश्वासों और धर्म-स्वीकृत मतों की उत्पति इनसे ही बाद में हुई है। स्मिथ का मत है कि धार्मिक कृत्यों एवं संस्कारों के सम्पादन से आदिम व्यक्तियों में सामाजिक शक्ति के प्रति आद, श्रद्धा भय व रहस्य की भावना उत्पन्न होती है और इसके साथ एक समूह विशेष के सदस्यों में एक ऐसी नैतिक भावना जाग्रत होती है कि वे एक समुदाय में बंध जाते हैं। इस सामूहिक शक्ति को समाज आध्यात्मिक सत्ता के रूप में प्रतिष्ठित कर देता है। अपने विचारों की पुष्टि में स्मिथ महोदय ने बहमूल्य दत्त-सामग्री (आँकड़ो) का संकलन विशेशतः “मोल्डटेस्टामेट” से किया। उनकी मान्यता थी कि धार्मिक विश्वासों के विकास में व्यवहार एक कार्य कारण सम्बन्ध में विश्वास से पूर्ववती है जो कि स्मिथ ने अपने जनरीतियों के उद्विकास के सिद्धान्त में बताया कि क्रिया विचार से पूर्वर्ती है।

जो कि स्मिथ ने अपने जनरीतियों के उद्विकास के सिद्धान्त में बताया कि क्रिया विचार से पूर्ववर्ती है। इसके पश्चात

धर्म-सम्बन्धी अध्ययनों पर स्मिथ के सिद्धान्त का बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा। कहना न होना कि स्मिथ के धर्म सम्बन्धी विचार और निष्कर्ष धर्म सम्बन्धी समाजशास्त्री सिद्धान्त के निर्माण में एक आधार प्रदान किया जिसे फ्रांसिसी समाजशास्त्री दुर्खीम एक प्रमुख व्याव्यता थे।

2. वेबर (1904) ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'द प्रोटेस्टैट एथिक्स एण्ड स्प्रिट ऑफ़ कैप्टिलिज्म' में धार्मिक व्यवहार की गम्भीर विवेचना की है। वे मानते हैं कि इसाइत के परम्परागत आचारशास्त्र भैतिक विकास में बाधक थे। इसमें से पोटेस्टैण्ट नामक एक नया सम्प्रदाय निकला। इसने नये मूल्य निर्धारित किये। टाइम इज गोल्ड, टाइम इज मनी, सूद लो और समय पर जैसे नये आधार और मूल्यों ने प्रोटेस्टैटवादियों के सामाजिक और धार्मिक व्यवहार को बदल दिया। इसके परिणामस्वरूप लोग भौतिक विकास के लिए अग्रसर हुए जिससे पूँजीवाद का विकास हुआ। इस प्रकार से पूँजीवाद के विकास में प्रोटेस्टैंट धर्म का विशेष योगदान है।

3. बंघोपाध्याय के. (1980) ने अन्तर्राष्ट्रीय बालक वर्ष (1979) के अवसर पर एक लेख लिखा, जिसमें उन्होंने बताया कि धार्मिक शिक्षा से बालकों में कुछ आवश्यक नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों जैसे प्रोम, दूसरों की सेवा, चारित्र निर्माण, अच्छाई, स्वच्छता आदि का विकास होता है। बच्चों को धार्मिक शिक्षा देने वाले शिक्षक भी पहले से धार्मिक शिखण में प्रशिक्षित होने चाहिए। उन्हें बच्चों को धर्म की शिक्षा देने के लिए विभिन्न धर्मों की ऐसी कहानियों का चुनाव करना चाहिए जिसमें नैतिकता का संदेश हो इस लेख में लेखक ने इस बात पर जोर दिया कि समाज के उत्थान के लिए धार्मिक शिक्षा भी विद्यालय पाठ्यक्रम का एक अंग होना चाहिए।

4. त्रिपाठी (1980) ने अपनी पुस्तक 'धार्मिक मटों संगठन तथा कार्य' में महत्वपूर्ण शोधकार्य प्रस्तुत किया जिसका शीर्षक था धार्मिक मठों का संगठन, जिसका निष्कर्ष यह निकलता है कि धार्मिक मठीय व्यवस्था ने आधुनिकता के समायोजन कर लिया है। इसमें शोधकर्ता का दृढ़ मत है कि अनेक संकटों के होते हुए भी मठीय व्यवस्था का अस्तित्व समाप्त नहीं होगा। धार्मिक मठों ने औद्योगिक सभ्यता ने बाह्य कलेवर को स्वीकार कर लिया किन्तु उसका आन्तरिक स्वरूप आज भी अपनी मौलिकता बनाये हुए हैं।

5. गिडेंस (1920) ने सभी हाल के अपने अध्ययनों में (कान्सिक्केश ऑफ़ मॉडर्निटी हाऊ ग्लोबलाइजेशन इन रीशेपिंग

अवर लिप्स) पुस्तक में यह सिद्ध किया है कि वैश्वीकरण ने आज विश्व स्तर पर एक नवीन आर्थिक व्यवस्था को जन्म दिया है। दुनिया के जो लोग इस नई व्यवस्था के हिस्से बने है तथ लाभान्वित नहीं हो रहे है व अपनी अस्मिता के लिए धार्मिक, सांस्कृतिक तथा नृजातीय मुद्दों का सहारा ले रहे हैं। गिडेंस की इस थीसिस के आधार पर दुनिया के इसी क्रम में मुख्य रूप से हिन्दु युवाओं के धार्मिक व्यवहार का अध्ययन प्रस्तुत शोध में किया गया है।

6. सिंह (1992) ने अपने शोधकार्य प्रस्तुत किया जिसका शीर्षक 'गृहणियों में धार्मिकता का समाजशास्त्रीय अध्ययन' है। जिसमें उन्होंने हिन्दु गृहणियों में धार्मिकता के तथ्य पर ध्यान केन्द्रित किया जिसके निष्कर्ष में लेखिका लिखती हैं कि शैक्षिक प्रगति एवं बौद्धिक विकास के फलस्वरूप साथ ही विज्ञान के चमत्कार एवं पश्चिमी चमक-दमक के प्रभाव में आकर अन्य लोगों की तरह हिन्दु गृहणियों की मानसिकता में भी निरन्तर परिवर्तन होता जा रहा है।

7. मिश्र (2001) ने अपनी पुस्तक जिसका शीर्षक 'हिन्दु महिलाओं के जीवन में धर्म का महत्व' में हिन्दु महिलाओं पर ध्यान केन्द्रित है और यह अनुभव किया है कि आज के भौतिकवादी समाज में धर्म की उपादेयता बढ़ रही है या घट रही है? हिन्दु समाज धर्म और आस्थामूक समाज रहा है। हिन्दु स्त्रियाँ और आस्था की प्रतिमूर्ति रही है। कालान्तर में आगे चलकर हिन्दु स्त्रियों की प्रतिभा का हनन भी किया गया है लेकिन कुछ समाज सुधारकों और स्वतंत्रता की अनुयायी करने वाली बौद्धिकता ने स्त्रियों की सोई हुई चेतना को जगाने का प्रयास भी किया। यह प्रयास सफल और सार्थक रहा। स्वतंत्रता के बाद भी भारतीय स्त्री काफी समर्थ और जीवन्त हो गई है। वह पुरूषों की दासी या भोग्या नहीं बल्कि समाज और राष्ट्र को दिशा देने वाली जागरूक सिपाही बन गयी है। शिक्षा के व्यापक प्रसार ने स्त्रियों के मनोबल उठाकर समाज में विशिष्ट पहचान बनायी है।

8. रॉय (2005) ने अपनी पुस्तक जिसका शीर्षक 'वैदिककालीन समाज और संस्कृति' जिसमें लेखिका कहती है कि वेदाध्ययन किये बिना कोई भी व्यक्ति भारतीय आत्मा को नहीं समझ सकता। इन्होंने इस पुस्तक में वेदों का गहन अध्ययन करके उसमें उपलब्ध भारतीय संस्कृति का नवनीत प्रस्तुत ग्रन्थ में देने का प्रयास किया गया है लेखिका ने इसी दृष्टिकोण से अपने विषय को प्रस्तुत किया जिसकी प्रामाणिकता के लिए मूल ग्रन्थों से उदाहरण दिये है। विषय विभाजन की दृष्टि को इसको निम्न अध्यायों में एकत्र किया है जिनमें सरल एवं युक्तियुक्त शैली का आश्रय लिया गया है। सामाजिक व्यवस्था राजनैतिक व्यवस्था, धर्म एवं दर्शन, कला एवं मनोरंजन के साधन, आर्थिक व्यवस्था तत्कालिक

आर्युवैदिक प्रगति एवं मानसिक रोगों का उपचार आदि इसके अतिरिक्त एक विस्तृत भूमिका भी दी है। जिसमें वेदों को विस्तृत एवं उपयोगिता बतलाया गया है।

9. सिंह (2005) ने अपनी पुस्तक जिसका शीर्षक 'धर्म का समाजशास्त्र' में एक विशिष्ट विद्या के आधार पर धर्म के केवल एक पक्ष अर्थात् सामाजिक अंतः क्रियात्मक पक्ष का पर्यवेक्षण करने का एक सद्प्रयास है। इसके अन्तर्गत प्रतीकात्मक अंतः क्रियात्मक सिद्धान्त तथा धर्म के सामाजिक पक्ष के अध्ययन हेतु प्रासंगिक आनुभाविक शोध के परिणामों का प्रयोग किया गया है। इस प्रस्तुति की यह मान्यता है कि धार्मिक विचार, विश्वास एवं व्यवहार सामाजिक प्रतिवेदन का प्रतीक है तथा सम्पूर्ण सामाजिक जीवन को निर्देशित करते हैं। धर्म का अस्तित्व एकाकी नहीं होता है। अतः इसकी व्याख्या स्वतंत्र तथा बाध्यता के रूप में नहीं बल्कि एक सामाजिक तथ्य के रूप में की जा सकती है। प्रस्तुत पुस्तक प्रणयन दो खण्डों में किया गया है। जो छब्बीस अध्यायों में विभक्त है।

10. काई ई, थोरसेन एट अल (जनवरी 2005) ने अपने पत्र जिसका शीर्षक 'धर्म जारी है' में धर्म महत्वपूर्णता को दर्शाया, क्योंकि यह व्यक्तिगत और सार्वजनिक चरित्र दोनों को जोड़ता है। इसका सम्बन्ध है कि धार्मिक विश्वास और प्रभाएं व्यक्तिगत जीवन और प्रभाव को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं। सार्वजनिक जीवन जो की दैनिक है, इसलिए सूफीबाद एक आध्यात्मिक सिद्धान्त और अभ्यास के रूप में आकर्षित हुआ है, आधुनिक दुनिया में कई मुसलमान राजनीतिक और शुद्धतावादी इस्लाम के विकल्प के रूप में है। इसके अलावा, सुफीवाद में इसकी गहराई के एक महत्वपूर्ण अनुस्मारक के रूप में कार्य करने का कौशल है। बढ़ती मुस्लिम चेतना के खिलाफ मदद करने की प्रतिबद्धता भी शामिल है। भौतिकवाद और उपभोक्तावाद आधुनिक दुनिया को संघर्ष करने पर मजबूर कर रहे है, इस प्रकार, यह निष्कर्ष निकाला गया, कि आधुनिकता को समझने और आधुनिकता का सही लाभ लेने के लिए सूफीवाद की एक महत्वपूर्ण भूमिका है।

11. शंकरानन्द (2007) ने अपने अध्ययन 'बौद्ध धर्म में निर्धारित बाईस प्रतिज्ञाओं के महत्व' को बताया है। आपका मानना है। आज संसार में अनेक धर्म प्रचलन में है। इन सभी धर्मों की अपनी अपनी मान्यताएँ एवं सिद्धान्त हैं जिनके आधार पर ही किसी भी धर्म का संचालन होता है, उसी प्रकार बौद्ध धर्म को मानने वालों के लिए उसकी बाईस

प्रतिज्ञाओं को समझना आवश्यक है। तभी वह सही अर्थ में बौद्ध कहलायेगा। इन प्रतिज्ञाओं में ब्रह्म, विष्णु और महादेव की पुजा न करना राम और कृष्ण को ईश्वर न मानना, गौरी गणपति की पुजा न करना ईश्वर के अवतार को न मानना व सभी मनुष्यों को समान समझना बौद्ध धर्म के अष्टांग मार्ग को अपनाना, चोरी न करना, झूठ न बोलना आदि प्रमुख हैं। उपरोक्त अध्ययनों के जो संदर्भ प्राप्त हुए है उनके आधार पर स्पष्ट हुआ है कि विभिन्न समाज वैज्ञानिकों ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के जीवन के विभिन्न पक्ष जैसे व्यक्तित्व एवं कृतित्व, उनके जीवन संघ और दर्शन, दलितों के उत्थान के लिए उनके द्वारा किये गये प्रयासों, बौद्ध धर्म को अपनाने का औचित्य आदि के संदर्भ में अध्ययन किया है। किसी भी समाज वैज्ञानिक ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के चिन्तन के प्रति युवा की सचेतना का अध्ययन नहीं किया है। प्रस्तुत अध्ययन में अन्वेषिण ने इसी अभाव की पूर्ति करने का प्रयास किया है और अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के चिन्तन के प्रति सचेतना को प्राप्त करने का प्रयास किया है।

12. मिकलेथवेट और वूल्ड्रिज (2009) ने 'गॉड इस बैक' जो धर्मनिरपेक्षता के कई लेख के विरूद्ध तर्क देती है और अधियाचित करती है कि बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में आस्था का वैश्विक पुनरूत्थान शुरू हुआ है। लेखकों का तर्क है कि धर्म दुनिया के हर किसी वर्ग के लोगों के सार्वजनिक जीवन में वापस आ रहा है और आधुनिकता की महान शक्ति प्रौद्योगिकी और लोकतंत्र, विकल्प और स्वतंत्रता जो सभी धर्म को कमजोर करने की बजाय उसे शक्ति प्रदान कर रही है। उन्होंने इस तथ्य पर भी ध्यान केंद्रित किया कि धर्म एक विकल्प का विषय बनता जा रहा है यह एक ऐसी अवधारणा है जिसे व्यक्ति स्वयं मानने का निर्णय लेता है न कि उस पर थोपा जाता है। पुस्तक में यह बताया गया कि विश्व भर में धर्म के नए रूपों की खोज की गई है, साथ ही कुछ ऐसे कारणों की व्याख्या की गई है, जिनके कारण धर्म आधुनिक समय में लोगों को आकर्षित कर सकता है। तेजी से विघटित हो रहे विश्व में समुदाय के स्त्रोत के रूप में, सहायक है। यह पुस्तक दुनिया भर में धार्मिक प्रवृत्तियों की एक बहुत ही पठनीय खोज है इस में यह भी बताया गया है कि विभिन्न क्षेत्रों में धर्म किस तरह से बदल रहा है। अक्सर, धर्म के पत्रकार उत्तरी अमेरिका और यूरोप को देखते हैं, जबकि वास्तविक परिवर्तन एशिया, दक्षिण अमेरिका और अफ्रीका में है। इस पुस्तक ने उन क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित

करने का अच्छा कार्य किया है।

13. एलनर (2009) ने 'अम्बेडकर की धम्म दीक्षा' नामक पुस्तक में बौद्ध धर्म के प्रति उनके लगाव का वर्णन किया है। आपने बताया है कि बौद्ध धर्म के प्रति अम्बेडकर का लगाव बचपन से ही था फिर भी उन्होंने अन्य धर्मों का गहनता से अध्ययन किया और सभी धर्मों का गहनता से अध्ययन किया और सभी धर्मों के धर्म-गुरूओं से विचार विमर्श जारी रखा। बाबा साहेब अम्बेडकर हिन्दु धर्म में बने रहने के लिए प्रयत्नशील थे लेकिन बड़े दुख के साथ कहना पड़ता है कि हिन्दु धर्म में न तो यह क्षमता पहले थी और न बाबा साहब के समय में और न ही आज है कि हिन्दु धर्म त्याग कर जाने वाले व्यक्ति को रोकने में सफल हो। हिन्दु धर्म में हिन्दु धर्म को छोड़कर जाने वाले के लिए तो बहुत सी सुविधाएँ हैं लेकिन उन्हें रोकने के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। इसी प्रकार अन्य धर्म का कोई व्यक्ति यदि हिन्दु धर्म में प्रवेश पाना चाहे तो उनके रास्ते में भी धर्म विधानों की बहुत ऊँची-ऊँची दीवारें रूकावट बनकर खड़ी मिलती हैं। इन दीवारों को बाबा साहेब अम्बेडकर को भी नहीं लांघने दिया गया था। अतः यह उनकी लाचारी थी कि उन्होंने हिन्दु धर्म को त्यागकर बौद्ध धर्म की राह पकड़ ली। यही बौद्ध धर्म की धम्म दीक्षा है।

14. जोलिएट (2009) ने 'अम्बेडकर की धम्मा दीक्षा का अध्ययन' कर उनके धार्मिक स्वरूप का अध्ययन किया है। अम्बेडकर के समय में हिन्दु धर्म में अनेक सामाजिक बुराइयाँ विद्यमान थी। वर्ण व्यवस्था का बोलवाला था जिससे दलित धर्म जाति के व्यक्तियों को धार्मिक अनुष्ठान एवं धार्मिक स्थलों में जाकर पुजा पाठ नहीं करने दिया जाता था। यदि कोई व्यक्ति ऐसा करता था तो उसे अनेक प्रकार की यातनाएँ दी जाती थीं। अम्बेडकर वर्ण व्यवस्था के घोर विरोधी थे और वे एक व्यवस्था चाहते थे जिसमें स्वतंत्रता समानता एवं सामाजिकता हो। अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म का गहनता से अध्ययन किया और उसमें पाया कि बौद्ध धर्म मनुष्य जाति के विकास के लिए उत्तम धर्म है। उसमें सभी को बराबर का सम्मान व्यवहारिकता एवं जीवन जीने की कला थी। अम्बेडकर जी ने हिन्दु की कुरीतियों से तंग आकर बौद्ध धर्म को ग्रहण कर लिया। इसी को अम्बेडकर की धम्मा दीक्षा कहा जाता है।

15. रस्तोगी, ए. एण्ड पराशर बी. (2009) ने सूक्ष्म-शिक्षण की अवधारणा पर एक ई-सामग्री विकसित की और ई-सामग्री उनकी उपलब्धि और शिक्षण कौशल में उनकी दक्षता के स्तर को बढ़ाने में कारगर साबित हुई- इस आधार पर वीडियो का उपयोग सभी छात्रों के लिए एक प्रभावी शैक्षिक उपकरण है लेकिन छात्रों की विशेष आबादी पर इसका सकारात्मक प्रभाव हर समय अधिक ध्यान आकर्षित कर रहा है। सार्वजनिक प्रसारण के लिए निगम के एक सर्वेक्षण के

अनुसार ये मीडिया, शिक्षण उपकरणों के रूप में अत्यधिक मूल्यवान है और विशेष रूप से दृश्य शिक्षार्थियों और विशेष आबादी तक पहुँचने के लिए प्रभावी लगते हैं। उपरोक्त सर्वेक्षणों में शामिल आधे से अधिक शोधार्थियों ने सीखने की अक्षमता या आर्थिक नुकसान वाले छात्रों को पढ़ाने के लिए टीवी और वीडियो को "बहुत प्रभावी बताया" तथा यह भी ज्ञात हुआ की छात्र प्रत्येक दिन का एक चौथाई से अधिक समय मिडिया और विशेष रूप से टेलीविजन के साथ जुड़े रहते हैं।

16. इवा ए. गोलेबि ओस्का (2009) ने पौलेण्ड में 'धार्मिक सहिष्णुता' का अध्ययन किया ये अध्ययन पोलिश जनता की राय में अल्पसंख्यक समूह कितना अच्छा या खराब प्रदर्शन करते हैं, इसकी जाँच करने के उद्देश्य और सही साक्ष्य जानना था। अध्ययन के नमूने में धार्मिक अल्पसंख्यकों जैसे कि यहूदी, मुस्लिम रूसी, रूढ़िवादी ईसाई और पोलैण्ड के प्रोटेस्टेट करने वालों को शामिल किया गया। अध्ययन दर्शाता है कि एक समूह के रूप में ध्रुव आत्याधिक सहिष्णु है। धार्मिक अल्पसंख्यक जिनकी सहिष्णुता की सीमा समूह और के साथ भिन्न होती है गतिविधि को सहन किया जाना चाहिए कितने सहिष्णु या असहिष्णु ध्रुव हैं। इसके अलावा, उन पर भी निर्भर करता है। सामाजिक परिस्थितियाँ (शिक्षा, आयु और धार्मिकता) और राजनीतिक रूचि और पौलेण्ड की स्वतंत्रता के लिए खतरे की धारणा और मनोवैज्ञानिक विशेषताएं हैं।

17. नवोमाह, एस, एम. (2011) ने अभिव्यक्ति प्रभाव और पर एक अध्ययन का प्रयास किया, 'नाइजीरिया में धार्मिक संकट पर आगे का रास्ता' अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह खोजना था कि नाइजीरिया में ईसाई-मुस्लिम के बीच धार्मिक संघर्ष के क्या कारण और परिणाम हैं। नमूने के तौर पर इस अध्ययन में ईसाई और मुस्लिम राजनीतिक नेताओं अनुयायिओं और जनता को शामिल किया गया। नाइजीरिया में समुदाओं और उनके बीच तनाव पर प्रकाश डाला गया। इसके निष्कर्ष से पता चला कि इस संघर्षो के दूरस्थ कारणों का साचा के ढाचा (पैटर्न) ये पता लगाया जा सकता है। अपनी उपस्थिति बनाए रखने के लिए अंग्रेजों द्वारा अपनाया गया औपनिवेशिक प्रशासन प्रयोग किया गया था।

18. टोफ्ट, फिलपोट, शाह (2011) ने 'गॉड ऑफ़' में बताया कि धर्म विश्व राजनीति में बुराई और अच्छाई को कैसे

स्पष्ट करता है और इसके प्रभाव के पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया तथा इसके पतन की भविष्यवाणियों के बावजूद भी धर्म ने दुनिया भर की राजनीतिक प्रभाव में फिर से उभार लिया है, और इसमें उन्हीं शक्तियों की सहायता मिली है जो इसे खत्म करने वाली थी। लोकतंत्र, वैश्वीकरण और प्रौद्योगिकी समाज में हाल ही में किए गए अधियाचित के बावजूद कि धर्म पूरी तरह से तर्कहीन और हिंसक है, और इसका राजनीतिक प्रभाव वास्तव में विविधतापूर्ण है, कभी-कभी यह गृहयुद्ध और आतंकवाद को बढ़ावा देता है। लेकिन कभी-कभी लोकतंत्र, सुलह और शान्ति को भी बढ़ावा देता है। दुनियाभर को देखते हुए, लेखक बताते हैं कि धर्म मौलिक रूप से भिन्न व्यवहारों को उत्पन्न करता है। ऐसे समय में जब धर्म पर सार्वजनिक चर्चा बहुत अधिक हो गई है और लेखक गहन मौलिक विश्लेषण और केस स्टडी का उपयोग करते हुए दर्शाते हैं कि वैश्विक राजनीति पर धर्म का प्रभाव कैसे और क्यों बढ़ रहा है। अंत में वे चुनौतियों का सामना करने और वैश्विक रूप से पुनरूत्थानशील धर्म द्वारा प्रस्तुत अवसरों का लभ उठाने के तरीके पर ठोस सुझाव देते हैं।

19. पांडे और पाराशर (2012) ने ‘ए स्टडी ऑफ़ सोशल एण्ड स्प्रिचुयल इम्पैक्ट ऑफ़ स्प्रिचुअल टूरिज्म ऑन कमिंग वैक्टर’ अपने लेख में प्रदेश पर्यटन उद्योग के सामने आने वाली चुनौतियों का वर्णन करने के लिए प्रकाश डाला। इस अध्ययन ने सामाजिक और आध्यात्मिक मूल्यों पर आध्यात्मिक पर्यटन के सकारात्मक प्रभाव की जांच की। इसके अलावा यह भी पता चला है कि बड़ी संख्या से लोग एक यात्रा प्रेरक के रूप में धार्मिक या पवित्र स्थानों पर जा रहे हैं। इसमें यह भी कहा कि यह प्रथा दुनिया के विभिन्न हिस्से में व्यापक रूप से फैली हुई है और इसे जैन धर्म ईसाई धर्म और इस्लामी, बौद्ध धर्म में देखा जा सकता है जिसमें धार्मिक आंदोलनों और संस्थानों द्वारा आध्यात्मिकता का मानव समाज पर गहरा प्रभाव पड़ता है अंत में, लेखकों ने यह निष्कर्ष निकाला कि आध्यात्मिक गुणों में एक महत्वपूर्ण सुधार है। जैसे कि सहिष्णुता के स्तर में 84 की वृद्धि प्रतिभागी या पर्यटक, पर्यटक के जीवन शैली में बदलाव आदि।

20. रोबर्ट एंड डॉस्ड (2014) ने ‘धार्मिक विविधता और धार्मिकता’ पर एक अध्ययन किया “सहिष्णुताः नाइजीरिया से सबक” इस अध्ययन का उद्देश्य प्रभाव को समझना था विकासशील देशों में धार्मिक साहिष्णुता पर धार्मिक

विविधता है और इसमें नाइजीरिया के मामले 2006 में एकत्र किए गए मूल सर्वेक्षण के डेटा शामिल थे। अध्ययन के सम्बन्ध में साक्षात्कार के माध्यम से धार्मिक पालन के प्रभाव की तुलना में नाइजीरिया के भीतर चार व्यवस्था में धार्मिक स्वतंत्रता है।

21. अब्रो, फतेह, सईद (2017) ने 'युवाओं में असहिष्णुता और पाकिस्तानी समाज पर इसका प्रभाव शहरी सिंध का समाजशास्त्रीय विश्लेषण' नामक शीर्षक शोध पत्र में शोधकर्ता ने शहरी सिंध के युवाओं में बढ़ती असहिष्णुता के स्तर के सह सम्बंधों का पता लगाने के प्रयास किए। व्याख्यात्मक और खोजपूर्ण शोध दृष्टिकोण प्रदर्शन किए गए हैं। गुणात्मक शोध पद्धति लागू की गई। डेटा संग्रह का प्रमुख स्त्रोत विभिन्न हितधारकों के साथ पाँच फोकस समूह चर्चाएँ और पाँच गहन साक्षात्कार थे। शोधकर्ताओं ने इन प्रश्नों पर विश्लेषण किया कि, पाकिस्तान के शहरी क्षेत्र में रहने वाले युवाओं में असहिष्णुता के साथ राजनीतिक धार्मिक और सामाजिक-आर्थिक कारकों के बीच क्या सम्बन्ध है? पाकिस्तान के शहरी क्षेत्रों में युवाओं में असहिष्णुता को बढ़ावा देने के लिए इलेक्ट्रॉनिक, प्रिन्ट, सोशल मीडिया की क्या भूमिका है? हम देश के शहरी क्षेत्रों के युवाओं में असहिष्णुता को कैसे नियंत्रित/प्रतिबंधित कर सकते हैं? परिणामों से पता लगाया कि शहरी समाज सामाजिक संस्थाओं की विफलता के उच्च स्तर से पीड़ित है दूसरी ओर प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक और सोशल मीडिया सिंध और पाकिस्तान के शहरी इलाकों में युवाओं में असहिष्णुता के स्तर को बढ़ाने में अपनी भूमिका निभा रहे है। यह निष्कर्ष हमारे समाज में हिंसा, आक्रामकता और अपराध की समस्या को समझने में मद्दगार होगा। शोधपत्र में इस बात की वकालत की गई है कि इन गम्भीर मुद्दों से निपटने के लिए निवारक उपाय किऐ जाने चाहिए।

22. हुसैन, अकरम (2021) ने 'स्कूली बच्चों में पारस्परिक सहिष्णुता के पूर्वानुमान: एक जनसांख्यिकी अध्ययन। वैश्विक समाजशास्त्रीय समीक्षा' यह मात्रात्मक अध्ययन स्कूली बच्चों में पारस्परिक सहिष्णुता के पूर्वानुमानों का पता लगाने के लिए तैयार किया गया है। आबादी में निजी और तैयार किया गया है। आबादी में निजी और सरकारी स्कूलों के बच्चे शामिल किये गए हैं। यादृच्छिक नमूनाकरण तकनीक का उपयोग करके (N=330) प्रतिभागियों का एक नमूना

चूना गया है। स्कूली बच्चों के लिए स्वदेशी रूप से विकसित पारस्परिक सहिष्णुता पैमाने (ITSSC) का उपयोग करके प्रतिभागियों से डेटा एकत्र किया गया। विभिन्न जनसांख्यिकीय चर और पारस्परिक सहिष्णुता के बीच सम्बन्धों को खोजने के लिए डेटा का सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया है। परिणामों ने संकेत दिया कि विभिन्न भविष्यवाणियों स्कूली बच्चों के बीच पारस्परिक सहिष्णुता में भिन्नता के लिए जिम्मेदार है। कुछ चर, जिनमें आयु, स्कूल का प्रकार, आवासीय क्षेत्र और पिता की शिक्षा शामिल है परिणामों में बच्चों के बीच पारस्परिक सहिष्णुता पर महत्वपूर्ण प्रभाव दिखाया, जबकि लिंग माँ की शिक्षा, परिवार प्रणाली और सामाजिक-आर्थिक स्थिति पारस्परिक सहिष्णुता में महत्वपूर्ण भविष्यवक्ता नहीं है।

उद्देश्य

1. युवाओं की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
2. आगरा के युवाओं में धार्मिक सहिष्णुता का अध्ययन करना।
3. धार्मिक सहिष्णुता के लिए उत्तरदायी कारकों का अध्ययन करना।
4. आगरा के युवाओं में अलगाव का अध्ययन करना।
5. आगरा के युवाओं में अलगाव के लिए उत्तरदायी कारकों का अध्ययन करना।
6. युवाओं में धार्मिक सहिष्णुता और अलगाव पर सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं

1. अधिकतर युवाओं की सामाजिक व आर्थिक पृष्ठभूमि निम्न पायी गयी।
2. आगरा के युवाओं में धार्मिक सहिष्णुता का अभाव है।
3. धार्मिक सहिष्णुता के लिए धर्मनिरपेक्षता एक आवश्यक गुण है।
4. आगरा के युवाओं में अलगाव पाया गया।
5. धार्मिक मौलिकतावाद युवाओं में अलगाव को बढ़ावा देता है।

6. युवाओं में धार्मिक सहिष्णुता और अलगाव पर सोशल मीडिया का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

शोधपद्धति

शोधकर्ता द्वारा प्रस्तुत अध्ययन का स्त्रोत रूप प्राथमिक व द्वितीय स्त्रोतों का चयन किया जाएगा। प्राथमिक स्त्रोत के अन्तर्गव प्रश्नवली सूची, साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया जायेगा। द्वितीयक स्त्रोत के रूप में पुस्तकों, लेख पत्रिकाओं व इन्टरनेट तथा अन्य माध्यमों का प्रयोग किया जायेगा-

शोध प्ररचना - प्रस्तावित शोध हेतु मात्रात्मक, गुणात्मक, वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध विधि का प्रयोग किया जायेगा। इसके अन्तर्गत चयनित विषय की विशेषताओं का विस्तारपूर्वक विवरण किया जायेगा तथा तथ्य संकलन के लिए साक्षात्कार अनुसूची और प्रश्नावली विधि का प्रयोग किया जायेगा।

अध्ययन क्षेत्र एवं समग्र - शोधार्थी द्वारा अध्ययन में युवाओं में धार्मिक सहिष्णुता और अलगाव एक समाजशास्त्रीय अध्ययन आगरा शहर के विशेष सन्दर्भ में किया जायेगा इसके अन्तर्गत आगरा शहर के 8 डिग्री कॉलेज का चयन किया जायेगा।

अध्ययन इकाई - शोधार्थी द्वारा आगरा शहर में डिग्री कॉलेज के 18 से 25 वर्ष की आयु वाले युवाओं का अध्ययन के लिए चयन किया जायेगा।

निदर्शन विधि- प्रस्तावित शोध हेतु आगरा शहर के 8 डिग्री कॉलेज को चयनित किया जायेगा जिसमें उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि और अनियमित निदर्शन विधि द्वारा लगभग 384 युवाओं का अध्ययन किया जायेगा।

अध्ययन का स्त्रोत: शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत अध्ययन के स्त्रोत रूप प्राथमिक व द्वितीयक स्त्रोतों का चयन किया जायेगा। प्राथमिक स्त्रोत के अन्तर्गत प्रश्नावली सूची, साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया जायेगा। द्वितीयक स्त्रोत के रूप में पुस्तकों, लेख, पत्रिकाओं व इंटरनेट तथा अन्य माध्यमों का प्रयोग किया जायेगा।

तथ्यों का विश्लेषण एवं सारणीयन: तथ्यों को अधिक स्पष्ट करने हेतु प्राप्त तथ्यों का सांख्यकीय विश्लेषण व सारणीयन किया जायेगा।

तथ्यों का चित्रमय प्रदर्शन - तथ्यों का विश्लेषण व सारणीयन के पश्चात् तथ्यों का विभिन्न प्रकार के चित्रों व ग्राफ आदि

के माध्यम से चित्रमय प्रदर्शन किया जायेगा।

प्रस्तावित अध्याय

प्रथम अध्याय:

प्रस्तावना

समस्या कथन

अध्ययन का महत्व

साहित्य का पुर्नावलोकन

अध्ययन का उद्देश्य

अध्ययन की परिकल्पना

अध्ययन का क्षेत्र एवं समग्र

द्वितीय अध्याय

अध्ययन की इकाई

निर्देशन

तथ्य संकलन

तथ्यों का वर्गीकरण, विश्लेषण एवं सारणीयन

तथ्यों का चित्रमय प्रदर्शन

तृतीय अध्याय

युवाओं की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।

चतुर्थ अध्याय

आगरा के युवाओं में धार्मिक सहिष्णुता का अध्ययन करना।

पंचम अध्याय

धार्मिक सहिष्णुता के लिए उत्तरदायी कारकों का अध्ययन करना।

षष्ठ अध्याय

आगरा के युवाओ में अलगाव का अध्ययन करना।

सप्तम अध्याय

आगरा के युवाओं में अलगाव के लिए उत्तरदायी कारकों का अध्ययन करना।

अष्ठम अध्याय

युवाओं में धार्मिक सहिष्णुता और अलगाव पर सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन करना

निष्कर्ष

संदर्भ ग्रन्थ

परिशिष्ट

साक्षात्कार अनुसूची/प्रश्नावली

संदर्भ ग्रन्थ

- फ्रेजर, जॉर्ज जेम्स (1890) 'द गोल्डन बॉफ, मैकमिलन एण्ड कम्पनी अमेरिका
- गिडेस, एंथनी (1920) डाई कान्सिक्वेंश ऑफ़ मॉडर्निटी, स्टैनफोर्ड न्यूनिवर्सिटी प्रेस, अमेरिका
- जोशी, एस. (2009) भारतीय संस्कृति और शिक्षा, मूल्य विमर्श
- लेविस, ए. (1971) मास्टर्स ऑफ़ सोशियोलॉजिकल थॉट आइडियांज इन हिस्टोरिकल एण्ड सोशल कॉन्टेक्स्ट, कॉलेज इन हिस्टोरिकल एण्ड सोशल का कॉन्टेक्स्ट, हरकोर्ट ब्रेस जोवेनोविश्वः न्यूयार्क, पार्ट 2, पृष्ठ 43-88।
- मिश्रा, प्रीती (2001) हिन्दू महिला के जीवन में धर्म का महत्व, आदित्य प्रकाशक, दिल्ली
- मिश्र. यू. (2019) शिक्षा का समाजशास्त्र, अनुभव पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद
- नारायण राम व्यास (1972) धर्म दर्शन, मध्य प्रदेश, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
- ओगबर्ग, विलियम फीडिंग (1922) संस्कृति और मूल प्रकृति के सामाजिक परिवर्तन का एक संस्करण, बीडब्ल्यू, हाबर्श इंक, अमेरिका
- प्रसाद, हरेन्द्र, सिन्हा (1962) धर्म दर्शन की रूप रेखा, मोतीलाल बनारसी दास

- रॉय, विमला देवी (2005) वेदकालीन समाज और संस्कृति, कला प्रकाशन
- एस., राधाकृष्णन (1922) हिन्दू धर्म इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ एथिक्स, शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस
- स्मिथ डब्ल्यू राबर्टशन (1894) रिलिजन ऑफ़ दि सेमिटिज, न्यूयार्क
- शर्मा, सुखदेव (1972), धर्म, दर्शन, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना-5
- स्ट्रास, लियो (1953) नेचुरल राइट एण्ड हिन्दी, शिकागो, शिकागो विश्वविद्यालय
- टी.बी. बोटोमेरे (1975) मार्क्सवादी समाजशास्त्र (अनुवादक सदाशिव द्विवेदी) मैकमिलन कम्पनी ऑफ़ इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली।
- वेबर, मैक्स (1904) डाई प्रोटेस्टेंटिसे एथिक अंडर डेर गीस्ट डेस कैपिटलिस्मस, जर्मनी
- नेहरू की 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' उनकी मृत्यु के 50 साल बाद भी बेस्टसेलर बनी हुई है, मुंबई समाचार - टाइम्स ऑफ इंडिया' टाइम्स ऑफ इंडिया। 30 मई 2014।
- 'भारत माता की जयः जवाहरलाल नेहरू की डिस्कवरी ऑफ इंडिया भारत की आत्मा में झांकने का मौका देती है'। फर्स्टपोस्ट। 29 अक्टूबर 2016।
- दास, तारकनाथ (जून 1947)। 'भारत-अतीत, वर्तमान और भविष्य' राजनीति विज्ञान त्रैमासिक 62 (2): 295-304. doi : 10.2307-2144210 . 2144210. (सदस्यता आवश्यक)
- जवाहरलाल नेहरू द्वारा भारत की खोज (पेपरबैक, तेरहवां संस्करण), आईएसबीएन 0-19-562359-2 , प्रस्तावना
- भटनागर, गौरव विवेक (17 नवंबर 2013)। 'नेहरू की आलोचना आलोचनात्मक जांच पर आधारित नहीं हैः सोनिया'। द हिंदू – www.thehindu.com के माध्यम से।

- भारत की खोज, एनसीईआरटी कक्षा 8. 'एनसीईआरटी भारत की खोज'। एनसीईआरटी। 12 मार्च 2024 को पुनःप्राप्त
- 'श्याम को क्या खास बनाता है...' द हिंदू। 17 जनवरी 2003 मूल से 27 जून 2003 को संग्रहीत। 6 जून 2013 को लिया गया।
- भारत की खोज, एनसीईआरटी कक्षा 8 'एनसीईआरटी भारत की खोज'। एनसीईआरटी। 12 मार्च 2024 को पुनःप्राप्त
- द हिंदू व्यू ऑफ लाइफ (1927), लंदनः एलन एंड अनविन
- एम.एन. रॉय, रीजन, रोमैंटिसिज्म एंड रेवोल्यूशनः खंड एक। कलकत्ताः रेनेसां पब्लिशर्स, 1952